हिन्दी - उर्दू ग़ज़ल : एक दृष्टिक्षेप

प्रोफेसर डॉ. इशरत खान

हमारे दैनिक जीवन में कई बार ऐसी स्थितयाँ आती हैं जब हम मन की उथल - पुथल को अभिव्यक्ति नहीं दे पाते हैं। ऐसे में सीधी और सपाट भाषा से इतर काव्य, शेरों-शाइरी या ग़ज़ल के माध्यम से हम अपनी भावनाओं को प्रेषित करते हैं।

इनमें से 'ग़ज़ल ' शब्द है तो अरबी भाषा का, लेकिन अरबी में लिखी गज़ले नहीं मिलती हैं। सर्वप्रथम ग़ज़ले आगमन उर्दू में हुआ और फारसी - उर्दू ग़ज़लों की देखा-देखी हिन्दी में भी ग़ज़ले लिखी जाने लगीं। मराठी, गुजराती, सिंधी और पंजाबी भाषा में भी आज ग़ज़लें खूब लिखी जा रही हैं।

'ग़ज़ल ' शब्द 'गजाला' से बना है। हिरन के बच्चे कों 'गज़ाला'[1] कहते हैं। जब व्याध हिरन के बच्चे को मारने के लिए तीर छोडता है अपनी जान बचाने के लिए दौडता हुआ वह किसी कंटीसी झाडीं में फँस जाता है तब उसके मुख से एक दर्दनाक एवं करुणाजनक चीख निकलती है, वही ग़ज़ल हैं।

अरबी भाषा में 'कसीदा' नामक एक काव्य-विद्या है। कसीदा से पहले एक छोटा-सा, दो या

चार पंक्तियों का प्रणयगीत कहने की परम्परा थी। इन पक्तियों को तश्बीब[2] कहा जाता था।[3]

अरबी ने इस्लाम को कबूल किया और ईरान पर कज़ा किया। लडाई के बाद सांस्कृतिक लेन-देन में अरबों का 'कसीदा' ईरान गया और देखते-देखते फारसी कवियो में खूब मशहूर हुआ। फारसी कवि, जो सौन्दर्योपासक थे, विद्वान थे, अनुभवी थे और जीवन के हर पहलू को परखते थे, कसीदा के 'तश्बीब' पर फिदा हो गये। उन्होंने तश्बीब को एक अलग काव्य-विधा माना और अपनी प्रतिभा से समृद्ध बनाया। इसी काव्यविधा को आज 'गजल' नाम से पुकारते हैं।

मेरे विचार से ग़ज़ल का संबंध भाव से होता है और भाव दो ही प्रकार के होते हैं - सुख - दुख, मानव - जीवन के इन्हीं भावों को गज़ल मे पिरोया गया है। विभिन्न साहित्यिक कोशों में ग़ज़ल को इस प्रकार परिभाषित किया है -

1) ग़ज़ल का अर्थ है 'प्रेमिका से वार्तालाप'। उर्दू - फारसी कविता का एक प्रकार विशेष जिसमें प्रायः 5 से 11 शेर होते है। सारे शेर एक ही रदीफ, काफिया में होते हैं। और हर शेर का मज़्मून अलग होता है, पहला शेर 'मत्ला' कहलाता है, जिसके दोनो मिस्रे सानुप्रास होते हैं, और अंतिम शेर 'मक्ता' होता है जिसमें शाइर अपना उपनाम रचता है। ग़ज़ल के संग्रह को 'दीवान' एवं संपूर्ण प्रकार के पद्यसंग्रह को 'बयाज़' कहते हैं।[4]

2. 'ग़ज़ल' एक पद्य प्रकार, यह अरबी मूल का है। अरबी से फारसी, फारसी से उर्दू मैं आया। गज़ल के सभी चरण वृत्त की दृष्टि से एक से होते है। उसका यह नियम होता है कि उमें आरम्भ से अन्त तक एक से अक्षरों का तुक हो। दो पंक्ति वाले रूप को शेर कहते हैं। पाँच से सत्रह शेरों के समूह को ग़ज़ल कहते हैं।[5]

3. ''ग़ज़ल एक प्रकार का वृत्त है। इसी प्रकार तरह यह एक कविता प्रकार और गायन प्रकार भी है। इस्लामी संस्कृति से भारतीय संगीत को मिली देन के रूप में इस सुगम गान-पद्धती को स्वीकार किया जाता है।''[6]

4. ''ग़ज़ल ' का शाब्दिक अर्थ है - नारियों से प्रेम की बातें करना।''[7]

5. ''ग़ज़ल' अरबी भाषा का शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ है - स्त्री से बातें करना।''[8]

विभिन्न ग़ज़लकारों और आलोचकों ने ग़ज़ल को यूँ परिभाषिक किया है -

1. ''ग़ज़ल' एक ऐसी काव्य-विद्या है जिसमें अनेक विषयों पर टुकडें टुकडें बातचीत की जाती है।'' (जहीर कुरैशी)

2. ''ग़ज़ल 'काव्य की एक विधा है। गेयता जिसमें शर्त है।'' (त्रिलोचन शास्त्री)

3. ''ग़ज़ल' जिन्दगी का आईना है।'' (श्याम झंवर श्याम)

4. हिन्दी 'ग़ज़ल ' एक प्रकार गीतात्मक कविता है फिर भी इसमें गीत की तरह पूरी कविता में एक ही विषयवस्तु नहीं होती है। एक ग़ज़ल के अलग -अलग शेर में अलग - अलग बात कही जा सकती है। (श्री गोपालकृष्ण कौल)

5. ''ग़ज़ल ' में गम्भीरता और जीवन - दर्शन तथा सतही उथलेपन की समान गुंजाइश है। (रामेश्वर शुक्ल, अंचल)

6. 'ग़ज़ल ' उर्दू काव्य का सर्वाधिक प्रसिद्ध और सरस भेद है। उसका स्थायी भाव प्रेम है जिसमें रहस्यानभुति मस्ती, धार्मिक विद्रोह आदि भावनाएँ संचारी रूपसे ओतप्रोत रहती हैं। विषय के अनुकूल उसका एक विशिष्ट काव्यरूप भी है जो मतला, मकता गिरत, काफिया और रदीफ में प्रसिद्ध रहता है। (डॉ. नगेन्द्र)

7. ''*दर्द का इतिहास है हिन्दी ग़ज़ल,*
एक शाश्वत प्यास है हिन्दी ग़ज़ल,
प्रेम, मदिरा, रूप साकी से सजा,
अब नहीं रनिवास हैं हिन्दी ग़ज़ल।'' (डॉ. घनश्याम अस्थाना रोहिताश्व)

इस प्रकार चन्द लफ्जों में दिल की बात कहने की कला का नाम है ग़ज़ल - टूटू दिल की पुकार है 'ग़ज़ल'

रात की खामोशीं में यादो का सफर हैं - ग़ज़ल

मेरी नजर में गज़ल यह है-

माशूक माशूका की मुहब्बत भरी बातों से बनती है गज़ल ।

व्यक्ति की आत्मपीडा से बनती है गज़ल ।

आम जन की शदीद तकलीफ से बनती है 'गज़ल'।

उर्दू में ग़ज़ल की बढती हुई लोकप्रियता से प्रभावित होकर हिन्दी कवियों ने इसे उत्साहपूर्वक अपनाया। उर्दू ग़ज़लों का मुख्य विषय प्रेम वर्णन है। वहाँ इश्क है, साकी है, शराब है, प्यासा है; लेकिन हिन्दी ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल को परम्परावादी विषयों से निकालकर आम आदमी की पीडा से जोड दिया है।

आजकल हिन्दी गज़ल मानवमन भी पीडा को स्वर देनेवाली गेयकाव्य की एक लोकप्रिय विद्या के रूप में प्रसिद्ध हो रही है। आज के श्रेष्ठतम् उर्दू गज़लकार एवं पाकिस्तान के सुप्रसिद्ध शाइर फैज़ अहमद फैज़ ने

अपनी भारतयात्रा के दौरान पत्रकारों को बताया कि 'ग़ज़ल को अब हिन्दी वाले जिंदा रखेंगे, उर्दू वालों ने उसका दम घोंट दिया है।''[9]

प्रत्येक विद्या का एक रूप (फॉर्म) होता है जिससे उसकी पहचान बनती है। इसी तरह ग़ज़ल का भी अपना एक रूप है जिसके आधार पर ग़ज़ल ने भी अपनी एक पहचान बनाई है। सामान्य रूप से ग़ज़ल, शेर, मिसरा, मतला, मकता काफिया और रदीफ आदि तत्त्वों से अपना रूप निर्धारित करती है।

'शेर' अरबी भाषा का शब्द है[10] जिसका अर्थ है – 'बाल' । स्त्रियों का सौन्दर्य बल से आंका जाता है। मान लीजिए कि स्त्री कितनी ही सुन्दर क्यों न हो पर यदि उसके खूबसूरत, घने लम्बे बाल नहीं हैं तो उसका सौन्दर्य फीका ही रहेगा । शेर का भी यही हाल है। यदि 'ग़ज़ल' एक सुन्दरी है तो शेर उसके बाल हैं। उन्हीं शेरों सें सम्पूर्ण ग़ज़लके प्राण बसते हैं। एक ग़ज़ल में कम से कम पाँच शेर और अधिक से अधिक सत्रह शेर होते हैं। शेर की हर पंक्ति को 'सिरा' कहा जाता है। इसको हिन्दी के 'दोहा', 'सोरठा' के समकक्ष रखा जा सकता है।

'मतला' का शाब्दिक अर्थ है, उदय होना या निकलने की जगह अर्थात प्रारम्भ करना। ग़ज़लका पहला शेर 'मतला' कहलाता है। इसकी दोनों पंक्तियाँ तुकान्त होती है –

''कैसे मंजर सामने आने लगे हैं,
गाते – गाते लोग चिल्लाने लगे है।''[11]

'मकता' का शाब्दिक अर्थ है – अन्त । ग़ज़ल का अन्तिम शेर 'मकता' कहलाता है। इसमें कवि का तखुल्लुस या उपनाम आता है अर्थात यही ग़ज़ल की समाप्ति होती है –

अब नयी तहजीब के पेशे – नजर हम,
आदमी को भूल कर खाने लगें हैं ।।[12]

लेकिन आज हिन्दी और उर्दू में ग़ज़लके अन्तिम शेरों में 'उपनाम' लिखने की परम्परा समांप्त – प्राय सी हो गई है। ग़ज़ल के शेरों के अन्त में जो शब्द बार – बार दुहराए जाते हैं उन्हें 'रदीफ' कहते हैं। जहीर कुरैशी की एक ग़ज़लके कुछ शेर में 'रदीफ' इस प्रकार है –

1. *डबडबाई आँख में आँसू की जनसंख्या पीडा से न देख,*
   मेरे उसके बीच, पीडा से अलग रिश्ता न देख।।

2. *कोई अच्छी – सी खबर भी ढूँढ खबरों में कहीं,*
   रोज अखबारों में दुर्घटना ही दुर्घटना न देख।

इनमें पहले शेर (मतला) के दोंनों मिसरों के अन्त में तथा अन्य शेर के दूसरे मिसरे के अन्त में न देख के

शब्द बार – बार आए हैं। इन्हें इस गज़लकी रदीफ कहा जाए गा। हिन्दी में इसे तुक कहते हैं। इसी कारण ग़ज़ल संगीत से भी जुड जाती है। इसीलिए ग़ज़ल में गेयता का गुण भी आ जाता है। रदीफ के पहले समान ध्वनि वाले शब्दों को *काफिया* कहा जाता है। उक्त शेरों में पीडा, रिश्ता, दुर्घटना में 'आ' ध्वनि काफिया हैं।

'ग़ज़ल' लिखते समय ग़ज़लकार को भाषा का विशेष ध्यान रखना पडता हैं। इसकी भाषा में नफासत और नज़ाकत का होना जरूरी है। इसी के ग़ज़ल कीं भाषा में बिम्ब, प्रतीक एवं अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया जाता हैं तभी ग़ज़ल प्रभावी हो सकती है।

1) हिन्दी ग़ज़ल की एक शानदार परम्परा रही है। इनमें खुसरो, कबीर, मीरा, जयशंकर प्रसाद, निराला, त्रिलोचन शास्त्री, दुष्यन्त कुमरा, नीरज, चन्द्रसेन विराट, डॉ. कुँअर बेचैन ज्ञानप्रकाश 'विवेक' डॉ. हनुमंत नायडु, अदम गोंडवी, जहीर कुरैशी, डॉ. रोहिताश्व अस्थाना, डॉ. रमासिंह आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

पछहत्तर के पश्चात हिन्दीं – उर्दू के शायरों एवं उनकी ग़ज़लों का परिचय इस प्रकार दिया जा रहा है –

दुष्यन्त कुमार, हिन्दी ग़ज़लके सशक्त हस्ताक्षर है। उन्होंने ग़ज़ल को उर्दू के परम्परावादी विषयों (हुस्न – इश्क – साकी – प्याला–जाम) से निकालकर, आम आदमी की पीडा सें जोड दिया। यही हिन्दी गज़ल के लिए दुष्यन्त की मौलिक देन कही जा सकती है। इस दृष्टि से उनका 'साये में धूप' (1975) यह बहुचर्चित गंज़ल – संग्रह है।

तीन सोपानों पर दुष्यन्त जी की ग़ज़लों को समझा जा सकता हैं। प्रथम सोपान में वे अपनी ग़ज़लों में सामान्यजनता की दयनीय स्थिति एवं उनके कारणों का उल्लेख करते हैं।

दुष्यन्त ने अपनी ग़ज़लों में आम आदमी की फटेहाल जिन्दगी, निराशा, उदासी, कसक, पीडा, घुटन, बैचैनी एवं विवशता का यथार्थ चित्रण किया है। आम आदमी की बेहाली एव गरीबी का चित्रण वे यूँ करते हैं–

न हो कमीज तो पाँवों से पेट ढँक लेंगे,
ये लोग कितने मुनासिब हैं, इस सफर के लिए।[13]

दुष्यन्तजी आम आदमी की इस बरबादी का जिम्मेदार एवं उच्च अधिकारियों, नेताओं को ही ठहराते है–

1) कहाँ तो तय था चिरागाँ हरेक घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।14

2) यहाँ तक आते – आते सूख जाती हैं कई नदियाँ
मुझे मालूम है, पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।[15]

दूसरे सोपान में ग़ज़लगो असम्भव को सम्भव बनाना चाहते हैं। वे, उनमें चेतना, जागृति एवं विरोध के भाव मरना चाहते हैं। वह आम जनता को सम्बोधित करते हुऐ कहते है कि कोई भी काम मुश्किल नहीं होता है, बस! साहस से काम लेना चाहिए। तभी हर मुश्किल, आसान हो जाती है –

यही संदेश प्रस्तुत शेर में दिया गया है –

कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता,
एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारों ।[15]

आप एक सजग ग़ज़लकार थे। इसलिए वें भ्रष्ट व्यवस्था कें खिलाफ विद्रोह की आवाज ग़ज़लो में बुलन्दत करते हैं –

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मक़सद नहीं,
मेरी कोशिश है कि सूरत बदलनीं चाहिए।[16]

दुष्यन्त की ग़ज़लो का तीसरा सोपान है – आशावादी दृष्टि। उनके यह आशा एक दिन हमारी जनता की स्थिति में सुधार अवश्य आएगा – यही आशा का स्तर प्रस्तुत शेर में दखा जा सकता है –

इस नदी की धार में ठंडी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही, लहरों से टकराती तो है।

दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों का शिल्प पक्ष लगभग उर्दू ग़ज़लके शिल्प की तरह ही है –

लेकिन रदीफ, काफिया एवं भाषा में कुछ नवीन प्रयोग भी किए गए हैं। रदीफ – काफिये की दृष्टि से दुष्यन्त जी ने तीन प्रकार के शेर लिखे हैं।

अ) प्रत्येक ग़ज़ल के प्रथम शेर में रदीफ काफिया प्रायः समान रूप से आए है – जैसे

हो गई है पीर पर्वत – सी, पिघलनी चाहिए।
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।'

उपर्युक्त शेर की दोनों पंक्तियों में चाहिए शब्द समान रूप से आए हैं। यह रदीफ है और दोनों पंक्तियों में नी ध्वनि समान रूप से आयी है – इसलिए यह काफिया है।

आ) दुष्यन्त जी की ग़ज़लों के कुछ शेरों में रदीफ एक से है लेकिन काफिया भिन्न – भिन्न हैं – जैसे –

ये सच है कि पाँवों ने बहुत कष्ट उठाए,
पर पाँव किसी तरह से राहों पे तो आए।[2]

उक्त शेर में रदीफ *(आए)* दोनों पंक्तियों में समान रूप से आया है लेकिन, काफिया (कष्ट, तो) भिन्न

– भिन्न रूप से आए है।

इ) दुष्यन्त जी ग़ज़लों में शेरों का तीसरा रूप वह है जिसमें रदीक एवं काफिया दोनों पंक्तियों में अलग – अलग है। नमूने के तौर पर एक शेर देखिए –

तुमने इस तालाब में रोहू पकड़ने के लिए
छोटी – छोटी मछलियाँ चारा बनाकर फेंक दी।[3]

ग़ज़ल लिखते समय ग़ज़लकार के भाषा का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। सादगी और नजाकत का भाषा में होना अनिवार्य माना गया है। उर्दू भाषा सें, हिन्दी गज़ल का संबंध होने के कारण, स्वाभाविक है कि इसमें उर्दू शब्दों का प्रयग भी अवश्य होगा। किन्तु दुष्यन्त जी ने उर्दू शब्दावली का प्रयोग बडी कलात्मकता के साथ किया है। इससे ग़ज़लों का सौन्दर्य और बढ गया है। आपने हिन्दी की प्रवृत्ति के अनुकूल ही उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है। इस सम्बन्ध में दुष्यन्त जी का कहना है –

''मैं स्वीकार करता हैं कि मैं उर्दू नहीं जानता लेकिन इन शब्दों का प्रयोग अज्ञानवश नहीं, जानबूझकर किया गया है। यह कोई मुश्किल काम नहीं जबकि *शहर* की जगह *नगर* लिखकर इस इस दोष से मुक्ति पा लूँ, किन्तु मैंने उर्दू शब्दों को उस रूप में इस्तेमाल किया है, जिस रूप में वे हिन्दी में घुलमिल गये हैं। उर्दू का शहत' हिन्दी में शहर' लिखा और बोला जाता है, ठीक उसी तरह जैसे हिन्दी का 'ब्राह्मण' उर्दू में 'बिरहमन' हो गया है, और 'ऋतु' 'ऋत' हो गयी है''[18] (दुष्यन्त कुमार : साये में धूप, ''में स्वीकार करता हूँ'' शीर्षक से : पृ.7)

दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में हिन्दी – उर्दू दोनों के सरल रूप मिलते है। उर्दू शब्दों के प्रयोग से इनकी भाषा में कोई दरुहता नहीं आने पायी है बल्कि भाषा और भी संजीदा बन गई है। इस संबंध में दुष्यन्त जी का कहना हैं कि – ''उर्दू और हिन्दी अपने – अपने सिंहासन से उतरकर जब आम आदमी के पास आती हैं तो उनमें फर्क कर पाना बडा मुश्किल होता है। मेरी नीयत और कोशिश यह रही है कि इन दोनों भाषाओं को ज्यादा – से ज्यादा करीब ला सकूँ। इसलिए ये ग़ज़ले उस भाषा में कही गयी है, जिसे मैं बोलता हूँ।''[19]

शब्दों की दृष्टि सें आपकी गज़लों की भाषा के चार रूप मिलते हैं।

1) दुष्यन्त जी ने अपनी ग़ज़लों में हिन्दी – उर्दू के मिश्रित शब्दों का प्रयोग किया है। एक शेर इस प्रकार है –

ये सच है कि पावों ने बहुत कष्ट उठाए।
पर पाँव किसी तरह राहो पे तो आए।

2) दुष्यन्त जीं की ग़ज़लों में कहीं – कहीं शुद्ध हिन्दी के शब्दों का भी प्रयोग किया है, परन्तु इसकी संख्या बहुत कम है। जैसे –

मत कहो, आकाश में कुहरा घना है,
यह किसी की व्यक्तिगत आलोचना है।

3) आपकी ग़ज़लो में अधिकतर उर्दू के सरल प्रचलित शब्द ही प्रयोग किया है जिसे पाठक अच्छीं तरह समझ सकता है । जैसे –

कैसे मंजर सामने आने लगे हैं
गाते – गाते लोग चिल्लाने लगे हैं।

4) दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लो में कहीं – कहीं उर्दू के कठिन शब्द भी मिलते है । उन ग़ज़लों का अर्थ समझने में भी कठिनाई होती है, खासतौर से उन लोगों को जिनको उर्दू नहीं आती है – प्रस्तुत शेर में अर्थ जटिलता देखने योग्य है –

हुजूर आरिजो – सखसार क्या तमाम बदन,
मेरी सुनो तो मुजस्सिम गुलाब हो जाए।

(आरिज – गुलाब, मुजास्सिम – मूर्तिमान, सर्वांगीण. सखसार – गुलाब)

वास्तव में दुष्यन्त जी आम जनता की तकलीफों और समस्याओं को उजागर करना चाहते थे। इसी कारण उन्होंने आम आदमी की जबान को अपनाया है – इस संबंध में वे लिखते है –

''मेरी दिक्कत यह थी कि उर्दू में जानता नही । 'हिन्दी में मुझे वह चुहल व मुहावरो और बोलचाल का वह बहाव नहीं मिला जिसके सहारे *ग़ज़ल* कही जाती। मुझे लगा कि आम आदमी एक मिलीजुली जबान बोलता है। वह न तो शुद्ध उर्दू होती है और न शुद्ध हिन्दी। इसीलिए मैंने उस भाषा की तलाश की जो हिन्दी को हिन्दी और उर्दू को उर्दू दिखाई दे और आम आदमी उसे अपनी जुबान समझकर अपना सकें।''

इसके साथ ही दुष्यन्त जीं ने ग़ज़लों की भाषा को बिम्ब, प्रतीक, एवं अलंकार आदि का भी सुन्दर प्रयोग किया है जो कि हिन्दी की प्रकृतीं के अनुसार ही हैं।

2) हिन्दी गज़ल में चन्द्रसेन विराटजीने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। इसका प्रमुख कारण है – उन्होंने उर्दू गज़लका अन्धानुकरण नहीं किया है। अर्थात इसके पीछे उनका हिन्दीवादी दृष्टिकोन ही रहा है. उन्होंने उर्दू – फारसी शब्दों के स्थान पर गज़लके लिए शुद्ध हिन्दी शब्दावली का प्रयोग किया है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य में गज़ल विद्या को मान्यता दिलाने का सार्थक प्रयास किया इस सन्दर्भ में एक उदाहरण द्रुष्टव्य है –

आदमी में जहर भी है और अमृत भी मगर,

इन दिनों विषदंत उभरे हैं, जहर हावी हुआ।

विराट की ग़ज़लें महानगरीय रुग्ण व्यवस्था सरदार मुजावर को परिभाषित करती है। इस वातावरण में प्यार - सुहानुभूति कुछ नहीं होती है, केवल दिखावा ही दिखावा होता है। प्रस्तुत शेर में महानगर की सच्चाई को व्यक्त किया गया है -

जलता जंगल महानगर
सूखा दल - दल महानगर
खुलती बोतल महानगर
बिकता आँचल महानगर

3. हिन्दी ग़ज़लकारों में एक जाना-पहचाना नाम है - डॉ. कुंअर बेचैन का। आप हिन्दी के लोकप्रिय गज़लकार हैं। आपके तीन ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुकें हैं - 'शामियाने काँच के', 'महावर इंतजारों का' और 'रस्सियाँ पानी की' (1987) आपकी ग़ज़लो में सामाजिक एवं राजनीतीक समस्याओं का यथार्थ चित्रण हुआ है। उन्होंने राजनीतिक भ्रष्टाचार को दिखाते हुए राज़नीतिक क्रान्ति का आह्वान किया है और नेतागणों को चेतावनी दी है जो देश के वातावरण को विषाक्त करते हैं। इसी भाव को व्यक्त करता हुआ शेर इस प्रकार है -

इस वक्त अपने तेवर पूरे शबाब पर हैं।
सारे जहाँ से कह दो, हम इंकालब पर हैं।
कोई मिटा न पाया हमको कुँअर जहाँ में, (शामियाने कॉच के पृ. 44)

इनकी ग़ज़लों की एक विशेषता यह भी है कि वे शेर अपना 'नाम' भी लिखते हैं। जबकि हिन्दी ग़ज़लमें इसका प्रयोग कम ही होता है।

4) हिन्दी के एक और महत्त्वपूर्ण ग़ज़लकार है - डॉ. हनुमंत नायडू। 'समीचीन' नामक त्रैमासिक में उनकी कुल बावन ग़ज़लें प्रकाशित हुई हैं।[20] इन बावन ग़ज़लों मे समाज एवं मानव की विभिन्न समस्याओं को समाविष्ट किया गया है। उन्होंने समाज में रहनवालों की स्थिति को एक शेर में इस प्रकार रेखांकित किया है -

आदमी एक जीवित हवन है यहाँ,
सत्य मुर्दा पड़ा बेकफन यहाँ।

3) हिन्दी ग़ज़लकारों में जहीर कुरैशी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके छः ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके है। कुरैशी जी ने अपनी ग़ज़लों में समकालीन समाज के विविध पदों का यथार्थ चित्रण किया है। आपने गज़लों के माध्यम से वर्ग विभाजित समाज व्यवस्था की आर्थिक विषमताओं, राजनीतिक विद्रूपताओं तथा सांस्कृतिक विडम्बनाओं का तीव्र स्वर में विरोध किया है। 'भ्रूण हत्या' से व्यथित होकर वे लिखते हैं-

लिंग निर्धारण समस्या हो गई,
कोख में कत्ल कन्या हो गई।

लोग कर पाए नहीं खुलकर विरोध,
सिर्फ अखबारों में निन्दा हो गई।[21]

उर्दू ग़ज़लकारों में नासिर काजमी, शहरयार, बशीर बद्र, जफर इक़बाल, बानी, जावेद अख्तर, कृष्णकुमार तूर, निदा भाजली और अकबर मासूम के नाम महत्वपूर्ण है –

1) निदा फाजली उर्दू के जाने – पहचाने शाइर हैं। आपके 'लफ्जों का पुल' (काव्य), 'मोर नाच' (काव्य), दीवारों के बीच (आत्मकथानक उपन्यास) तथा खोया हुआ सा (शाइरी) आदि ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं।

'खोया हुआ – सा' काव्य संग्रह में नज्में, ग़ज़ले और दोहे संग्रहीत हैं।

निदा फाजली के शेरों की दुनिया हमारी जानी पहचानी है। इस दुनिया में धार्मिक पाखंड और शोषक वर्ग से सताए हुए लोग है। खेतों पर काम करते हुए किसान और स्कूल जाते हुए बच्चे हैं। उनके दुखों – सुखों की फिदा ने अपनी ग़ज़ल का विषय बनाया है (सजी – धजी नायिका की जगह आंगन में गेंद से खेलता हुआ बच्चा उन्हें अधिक आकर्षित करता हैं। उसी में वे यथार्थ को अधिक समीप देखते हैं– इसी भाव को दर्शाता एक सेर देखिए–

ऐ शाम के फरिश्तो जरा देख के चलो,
बच्चों ने साहिलों पे घरोंदे बनाए हैं।

निदा जी केवल कल्पना में ही नहीं विचरते है बल्कि वे ठोस यथार्थ के शाइर हैं। उन्होंने जीवन के हर पहलुओं का तानाबाना शाइरी में बुना है। उनके कुछ शेर इस प्रकार हैं –

1) *कोशिश भी कर, उम्मीद भी रख, रास्ता भी चुन,*
फिर इसके बाद थोडा मुकद्दर तलाश।

2) *मेहमान कभी ऐसा भी आ जाता है घर में,*
कुछ दिन को नई लगती है हर चीज़ पुरानी

2. उर्दू शाइरी में 'बशीर बद्र' एक जाना – पहचाना नाम है। उनके 'आमद', 'इकाई,' 'इनेज', 'आस', 'आसमान', 'कल्चर यकसा', 'हरा रिबन', 'धूप की पटली' तथा 'उजाले अपनी यादों के' ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

''उजाले अपनी यादों के' संग्रह में सभी रचनाएँ ग़ज़लके फॉर्म में मिलती हैं। इसमें, बशीर जी ने ग़ज़ल को एक नया जीका दिया हैं। उसमें जीवन की छोटी – छोटी इच्छाओं को दर्ज किया है। आज भी बशीर बद्र

जैसे शाइर ग़ज़ल की समृद्ध परम्परा बनाए हुए हैं। उन्हें मानवीय पीडा का तीव्र एहसास है। 'दंगों' पर कहे हुए शेर, पाठकों का ध्यान बरबस अपनी ओर खींच लेते है - एक शेर देखिए -

लोग टूट जाते हैं एक घर बनाने में
तुम तरस नहीं खाते बस्तियाँ जलाने में।

3. 'शीन काफ़ निज़ाम' एक चेतना सम्पन्न शाइर हैं। 'लम्हों के सलीब', 'नाद', 'दश्त में दरया', 'साया कोई लम्बा न था' तथा 'सायों के साये में' काव्यसंग्रह उर्दू और हिन्दी में प्रकाशित हुए है।

'निज़ाम' की ग़ज़लों में आम आदमी की पीड़ा एवं दुखों को अभिव्यक्ति मिली है। आपकी शाइरी की मुख्य विशेषता है - धर्म निरपेक्षता. वे साम्प्रदायिकता को भग्न व्यवस्था का परिणाम मानते है - इस तरह का एक शेर सादर है -

'पत्थरों की नदी बह गई शहर में
जाने कैसी हवा फिर बही शहर में।

दोनों अत्राफ के लोग जख्मी हुए,
पत्थरों की कहाँ थी कमी शहर में।'

उर्दू शाइरी में जावेद अख्तर का महत्वपूर्ण स्थान है। इनका 'तरकश' नाम से संग्रह प्रकाशित हुआ है। जावेद को शाइरी के संस्कार विरासत में मिले हैं लेकिन फिल्मी लेखन के कारण उनके ग़ज़ल-लेखन की एकाग्रता मे बिखराव आया हैं। इसीलिए वे अपना कोई रंग विकसित नहीं कर पाए। इस संग्रह में उनकी नज्में और ग़ज़लें है लेकिन इनमें स्तरीय ग़ज़ल-लेखन का अभाव है।

6. जिन शायरों मे अपनी नज्मों एवं ग़ज़लों की चमक से, उर्दू अदब में अपनी पहचान बनाई है उनमें शहरयार का नाम उल्लेखनीय है। आपका नाम है - कुँवर अखलाक मुहम्मद खाँ। लेकिन आपका *अदबी* नाम 'शहरयार' है। आपके संग्रह है - 'इस्में आज़म', 'सातवाँ दर', 'हिज्र के मसिम', 'ख्वाब का दर बंद हैं', 'नींद की किरचें' और शाम होने वाली है' (साहित्य - अकादमी पुरस्कार) शहरयार को ज्ञानपीठ अवार्ड से भी नवाजा गया है ।

इनकी ग़ज़लों में समाज के विविध पहलुओं का यथार्थ चित्रण किया गया है वह अपनी समाजी जिम्मेदारी कभी नहीं भूलते हैं। उनका कहना है कि 'अगर अदीब समाजी फर्ज भूल गया तो वह तखलीक नहीं कर सकता और अपने मुआशरिती किरदार को निभाने के लिए गौर व फिकर करनेवाला ज़हन (समझ) होना चाहिए। फिकरी क्लाशी अफसोस और शरम के अलावा कुछ नहीं दे सकती।'' वह मानते हैं कि आज माहौल बद से बदतर हो गया है, फिर भी वे उम्मीद नहीं छोड़ते । इसी भाव को व्यक्त करता हुआ एक शेर उद्धृत है -

आज का दिन हाँ बहुत अच्छा नहीं तसलीम है।
आनेवाला दिन बहुत बेहतर है मेरी राय में।

शहरयार की शाइरी तन्हा लम्हों में जनम लेती है। और इन्सानी जिन्दगी में पैदा हुए दर्द और उलझन अक्सर इनके दिल को छू जाती है। वह वर्तमान सामाजिक स्थिति को स्वीकार नहीं कर पाते और बहुत ही उचित सवाल उठाते हैं –

तुम्हारे शहर में कुछ भी हुआ नहीं है क्या,
के तुमने चीखों को सचमुच सुना नहीं क्या।

मैं इक जमाने से हैरान हूँ के हाकिम शहर,
जो हो रहा है इसे देखता नहीं हूँ क्या।

यह तो 'शहरयार' की एक बेचैनी है। इसी कारण उन्होंने सामाजिक स्थिति को उजागर किया है – कुछ शेर इस प्रकार हैं –

अ) आँधी की जद में शमा तमन्ना जलायी जाए,
जिस तरह भी हो लाज जनों की बचायी जाए।

आ) जो बुरा था, वह हो गया अच्छा कैसे,
वक्त के साथ में, इस तेजी से बदला कैसे।

भारत की प्रमुख समस्या है – भारत–विभाजन एवं साम्प्रदायिकता की। यही साहित्य का मुख्य मुद्दा रहा है।

चाहे फैज़ की शाइरी हो, या राहीमासूम रजा का 'आधा गाँव' या कुर्रतुल – सेन – हैदर का 'आग का दरिया' । चाहे हिन्दी साहित्य में मुक्तिबोध, अज्ञेय , शमशेरबहादुर सिंह या नागार्जुन की कविताएँ हों। हमें हर जगह यह दुख दिखाई देता हैं – इस सन्दर्भ में आम जनता को सम्बोधित करते हुए शहरयार कहते हैं–

तमाम शहर आग की लपेट में है शामिल,
बुजूर कब से मीठी नींद सो रहे हैं जागिए।

कहीं न सबको समन्दर बहा के ले जाए
यह खेल खत्म करो किश्तियाँ बदलने का।

शहरयार की ग़ज़लों की भाषा ऐसी है कि वह हिन्दी पाठकों के लिए सम्प्रेषणीय है। यदि हिन्दू – उर्दू गज़ल की तुलना की जाए तो सबसे अधिक अन्तर विषय में दिखाई देता है। उर्दू में इश्किया शाइरी की गई है लेकिन हिन्दी में आम आदमी की पीडा, सामाजिक – आर्थिक विषमता एव राजनीतिक भ्रष्टाचार को गज़ल

का प्रमुख विषय बनाया गया है अर्थात हिन्दी में प्रेमभरी गजलों के स्थान पर आम जनता की पीडा भरी गजल लिखी गयी है। जो कि हिन्दी ग़ज़लकी एक बडी उपलब्धि है – इस सन्दर्भ एक एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

1. *देखने के लिए इक चेहरा बहुत होता है,*
   आँख जब तक है तुझे सिर्फ तुझे देखूंगा। (शहरयार)
2. *ये सारा जिस्म झककर, बोझ से दुहरा हुआ होगा,*
   मैं सजदे में नहीं था, आपको धोखा हुआ होगा। (दुष्यन्त कुमार)

भाषा की दृष्टि से हिन्दी में सरल उर्दू शब्दों का प्रयोग किया गया है। हिन्दी – ग़ज़ल में काफिया – शदीफ का भी बन्धन नहीं है।

वैसे ग़ज़ल फॉर्म हिन्दी – उर्दू में विकसित हो रहा है। लेकिन हिन्दी – उर्दू 'ग़ज़ल' में एक कमी है – वह भी प्रतीकों को लेकर। इक दोनों भाषाओं की ग़ज़लों में ऐसे क्लिष्ट प्रतीक प्रयुक्त किए गए हैं जोकि एक सामान्य पाठक के लिए समझना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। अगर हिन्दी उर्दू की ग़ज़लों में सरल प्रतीकों का प्रयोग किया जाए तो आम जनता हिन्दी – उर्दू ग़ज़ल का खूब स्वागत करेगी। ग़ज़ला भविष्य प्रकाशमय होगा।

सन्दर्भ :

1. मुहम्मद मुस्तफा खाँ 'मद्दाह', उर्दू – हिन्दी शब्दकोश उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 11 वी संस्करण 2006 p.viii+756 : पृ. 165
2. 'कसीदा' के 'तश्बीब' में किसी धार्मिक या राष्ट्रीय नेता, बादशाह या कि महान पुरुष की प्रशंसा की जाती है।
3. सरदार मुजावर : हिन्दी ग़ज़लके विविध आयाम : पृ. 13
4. यमद्दाहब : उर्दू – हिंदी शब्दकोश : पृ. 966
5. भारतीय संस्कृति कोश (संपादक : पंडित महादेव जोशी), पुणे, दूसरा खंडः पृ. 686)
6. मराठी विश्वकोश (संपादक : तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी), महाराष्ट्र राज्य मराठी विश्वकोश निर्मिती मंडळ, वाई, (खंड 4) पृ. 655
7. धीरेन्द्र वर्मा (सम्पादक) : हिन्दी साहित्य कोश पृ. 216 (भाग 1)
8. एहतिशाम हुसैन : उर्दू साहित्य का इतिहास : पृ. 354
9. डॉ. पद्मा पाटिल : साये में धूप (समकालीन सृजन सन्दर्भ) पृ. 10
10. मद्दाह : उर्दू – हिन्दी शब्दकोश : पृ. 648 (सम्पादक)
11. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 2008 : पृ.
12. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ.

13. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 13
14. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 13
15. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 15
16. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 30
17. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 16
18. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : मैं स्वीकार करता हूँ शीर्षक से : पृ. 7
19. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : मैं स्वीकार करता हूँ शीर्षक से : पृ. 7
20. डॉ. पद्मा पाटिल : साये में धूप (समकालीन सृजन संदर्भ : पृ. 10)
21. रतनकुमार पाण्डेय : अनभै : पृ. 58

संदर्भ :

अ. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 30 (गजल का प्रथम शेर)

अ. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 42 (गजल का प्रथम शेर)

इ. दुष्यन्त कुमार : साये में धूप : पृ. 54 (गजल का प्रथम शेर)

ई. चन्द्रसेन विराट के गज़ल-संग्रहनिवर्सना चाँदनी, आस्था के अमलतास, कंचनार की टहनी, धार के विपरीत, परिवर्तन की आहट, लडाई लम्बी है।

प्रोफेसर एवं विभाग प्रमुख,
हिंदी विभाग,
गोवा विश्वविद्यालय
ताळगांव पठार, तिसवाडी,
गोवा - 403206
दूरध्वनी : 2736106